International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2016; Page No. 41-43

विदुरनीति का साम्प्रतिक महत्व

डॉ० साधना सहाय

प्राचार्या, ई०ने०म०स्ना० महाविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

विदुर नीति एक ऐसी अखण्ड ज्योति है जो सृष्टि के रहने तक अर्थात् अंत तक जलती रहेगी। इसमें वर्णित नीतियों का महत्व इसी से सिद्ध हो जाता है कि इन्हें न मानने वाले सम्पूर्ण कुरूवंश का विनाश हो जाता है। यह धर्म की, न्याय की एक ऐसी मशाल है, जिसकी आवश्यकता वर्तमान में सर्वाधिक है, क्योंकि धर्म के नाम पर आज विवेकहीन भावुकता को उभारकर मानव को धर्मान्ध बनाया जा रहा है। धर्म मानव को कर्त्तव्योन्मुख बनाता है न कि पलायनवादी या क्रूर।

इसी प्रकार न्याय प्रियता, द्यूत आदि व्यसनों से दूरी आदि गुण व्यक्ति को सन्मार्ग और उन्नति के मार्ग पर ले जाते है, जैसे युधिष्ठिर। वर्तमान पीढ़ी इन अमूल्य धरोहरों से, इस ज्ञान से अनभिज्ञ होती जा रही है। परिणामस्वरूप वह भोगवादिता को सर्वोपरि मान बैठी है। उसका आदर्श 'सर्वे गुणाः काञ्चनम् आश्रयन्ति' होता जा रहा है। परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार की जड़े फैलती जा रही है। भोगवादिता तभी सफलीभूत होती है जब वह अध्यात्म के साथ जुड़ी हो अर्थात् जब तक मानव को यह विदित नहीं होगा कि क्या नित्य है क्या अनित्य, क्षमा क्या है? दया किसे कहते हैं? विद्यार्थि के श्रेष्ठ गुण कौनसे हैं? आचरण कैसा होना चाहिए? परिवार में कलह क्लेश किस प्रकार विनाशकारी हो सकता है? पंडित कौन है? मूर्ख के क्या लक्षण होते हैं? किस प्रकार न्याय के पथ पर चलते हुए राजा प्रह्लाद ने अपने पुत्र को दोषी ठहराकर साधारणह् ब्राह्मण पुत्र सुधन्वा के पक्ष में निर्णय देकर अपार यश प्राप्त किया और पुत्र के प्राणों की भी रक्षा की आदि, तब तक वह सही निर्णय नहीं ले सकता। मात्र मोह, अज्ञानता, अकर्मयता और भाग्यवादिता का ही आश्रय लेता रहेगा जैसा कि धृतराष्ट्र ने किया और सर्वनाश को प्राप्त किया। वर्तमान में इस नीति का महत्व बहुत अधिक है। इसे समझकर आत्मसात् करने और फिर व्यवहार में लाने की नितान्त आवश्यकता है।

महाभारत के 18 पर्वों में उद्योग पर्व पांचवे स्थान पर आता है। दुर्योधन द्वारा पांडवों की पांच गाँवों की मांग 'सूच्यग्रं नैव दास्यामि विना युद्धेन केशव' कहकर अस्वीकार कर दिये जाने के उपरांत पांडवों के समक्ष युद्ध के अतिरिक्त और कोई उपाय शेष नहीं रहता। तब पांडवों की ओर से सात अक्षौहिणी सेना तथा कौरवों की ओर से ग्यारह अक्षौहिणी सेना युद्ध के लिए सन्नद्ध हो जाती है। दोनों ओर से युद्ध के लिए 'उद्योग' प्रारम्भ हो जाता है। अतः महर्षि वेदव्यास ने इस पर्व का नाम उद्योग पर्व रखा। नीतिशास्त्र की दृष्टि से यह पर्व उत्कृष्ट माना जाता है, क्योंकि व्यवहार में कुशल महात्मा विदुर की नीतियों को बताने वाला प्रजागर पर्व इसी पर्व का भाग है जो संस्कृत साहित्य का मुकुट मणि है। महात्मा विदुर के द्वारा अन्धे धृतराष्ट्र को दिया गया, यह व्यवहारिक उपदेश आज संस्कृत साहित्य एवं समाज में 'विदुर नीति' के नाम से जाना जाता है। महाभारत में वर्णित यह 'विदुर नीति' शुक्रनीति, भर्तृहरि नीति आदि अनेक नीति ग्रंथों से श्रेष्ठ है तथा यदि इसका ध्यान से अध्ययन अध्यापन किया जाए तो वर्तमान में समाज में अनेक कुरीतियों, अनाचारों एवं कदाचारों को इन नीतियों के अनुपालन से दूर किया जा सकता है।

महाभारत जहां एक ओर पारिवारिक कलह, क्लेश, वैमनस्य, ईर्ष्या–द्वेष आदि की गाथा है वहीं दूसरी ओर इन दुर्गणों के कारण पूरे कुल को महाविनाश के झंझावात में फंसाने वाले युद्ध की विभीषिका की भी करूण गाथा है। विनाश के साथ–साथ इस उपजीव्य ग्रंथ में नीतिपरक उपदेशों का अमृत तत्व भी प्रचुर रूप में विद्यमान है जो संपूर्ण मानव जाति को पथ–प्रदर्शक, अद्भुद, विलक्षण उपाय बताने वाले जीवन के सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक प्रसंगों का संदेश देता है। युद्ध से विमुख हुए कायरता और पलायन की ओर उन्मुख अर्जुन को श्रीकृष्ण का उपदेश (जो आगे चलकर भगवद्गीता नाम से विश्वविख्यात हुआ) भी इसी ग्रंथ की देन है। पुत्र मोह में अन्धे धृतराष्ट्र को ज्ञान प्रदान करने वाला महात्मा विदुर का अप्रतिम ज्ञान 'विदुरनीति' भी इसी ग्रंथ का भाग है। इतना ही नहीं युधिष्ठिर से यक्ष के प्रश्न और उनका बुद्धिमत्ता पूर्ण उत्तर देने वाले युधिष्ठर और यक्ष के संवाद का उदय भी इसी ग्रंथ से हुआ। ये तीनों ज्ञान सार्वभौमिक सार्वकालिक हैं तथा मानव जाति के संरक्षक हैं।

इन तीनों ज्ञानों में मात्र विदुरनीति ही ऐसा ज्ञान है जो दिए गए पात्र धृतराष्ट्र द्वारा स्वीकारा नहीं गया अर्थात् धृतराष्ट्र ने पुत्र मोह में डूबने के कारण विदुर के इस ज्ञान को तिरस्कृत कर दिया। यह जानते हुए भी कि युधिष्ठिर के प्रति वे अन्याय कर रहे हैं और विदुर जो कह रहे हैं वह सत्य है, धृतराष्ट्र पुरुषार्थ से मुंह मोड़ लेते हैं और सब कुछ विधाता पर छोड़ देते हैं। उनकी निश्चय या संकल्प बुद्धि इतनी दुर्बल पड़ जाती है कि समझते हुए भी वे विनाश को आमंत्रण दे देते हैं और पूरे कुरुवंश का युद्ध में विनाश हो जाता है।

प्रजागर पर्व के प्रारम्भ में संजय पांडवों के शिविर से लौटकर आते हैं तथा पांडवों और द्रौपदी के साथ हुए अनाचार एवं कुकृत्यों के लिए धृतराष्ट्र को फटकारते हैं। परिणाम स्वरूप धृतराष्ट्र मानसिक उद्वेलन से ग्रसित होने के कारण रात्रि में सो नहीं पाते हैं, तब संकट की इस घड़ी में विदुर को बुलाते हैं।[1] विदुर के लिए स्वयं धृतराष्ट्र ने कहा है 'त्वंहि नः तात धर्मार्थ कुशलो असि'।[2] धृतराष्ट्र विदुर के विषय में यह उद्गार अनेकशः प्रकट करते हैं कि हे विदुर हम सभी में तुम्हीं धर्म और अर्थ के ज्ञान में निपुण हो। विदुर संजय आया था वह मेरी निन्दा करके चला गया है। आज मैं उस कुरूवीर युधिष्ठिर की बात नहीं समझ सका। अतः यह बात मेरे अंगों को जला रही है और इसी कारण निद्रा मुझसे दूर चली गयी है।[3] तब धृतराष्ट्र के कहने पर विदुर, नीति संगत यह उपदेश धृतराष्ट्र को देते हैं।

उद्योग पर्व में विदुर की यह नीति 33वें अध्याय से प्रारम्भ होकर 40वें अध्याय तक वर्णित है तथा इसमें लगभग साढ़े पांच सौ श्लोक हैं।

विदुर धृतराष्ट्र को नींद न आने का कारण बताते है कि किस व्यक्ति को रात्रि में नींद नहीं आती, 'जिसका बलवान के साथ

विरोध हो, साधनहीन हो तथा दुर्बल हो, कामी हो तथा चोर हो।'[4] विदुर घृष्टराष्ट्र पर कटाक्ष करते हुए पूछते हैं न कि राजन कहीं आपका भी ऐसे तत्वों के साथ तो सम्पर्क नहीं हो गया? कहीं पराये धन के लोभ से तो आप कष्ट नहीं पा रहे हैं?[5] क्योंकि विदुर जानते थे कि धृतराष्ट्र का हस्तिनापुर की गद्दी के लिए दुर्योधन को युवराज घोषित करना पराये धन पर लोभ का ही सूचक था, क्योंकि पांडव पुत्र युधिष्ठिर गद्दी के अधिकारी थे। वेदों में भी कहा गया है कि 'आत्मवत् सर्वद्रव्येषु पर द्रव्येषु लोष्ठवत्'। आज भी ऐसे अनेक जन एवं राष्ट्र हैं जो पराये धन पर सत्ता स्थापित करना चाहते हैं और विनाश के गर्त में जा रहे हैं। विदुर के अनुसार जिसकी लौकिक बुद्धि धर्म और अर्थ का ही अनुसरण करती है और जो भोग को छोड़कर पुरूषार्थ का वरण करता है[6], जिसके विचार को मनुष्य नहीं जान पाते कार्य पूर्ण होने पर ही जान पाते हैं[7], जो दुर्लभ वस्तु की कामना नहीं करता, खोयी हुई वस्तु के विषय में शोक नहीं करता और विपत्ति में नहीं घबराता[8] ऐसे जन पण्डित होते हैं। पण्डित की अन्य पहचान बताते हुए विदुर कहते हैं जो पहले निश्चय किए हुए कार्य का आरम्भ करता है, कार्य के बीच में नहीं रूकता, समय नष्ट नहीं करता और चित्त को वश में रखता है, वही पण्डित है।[9] आगे बुद्धिमान के लक्षण बताते हुए विदुर कहते हैं कि जो आदर होने पर हर्ष के मारे फूले नहीं समाता, अनादर से संतप्त नहीं होता, जिसका चित्त क्षुभित नहीं होता[10], जिसकी विद्या बुद्धि का अनुसरण करती है वहीं पंडित है और बुद्धिमान व्यक्ति के बताए लक्षणों से स्पष्ट है कि विदुर धृतराष्ट्र की दुर्बलताओं को पहचानते थे कि वे जानते थे कि हस्तिनापुर की गद्दी जो उनके पुत्र के लिए नहीं है वे उसके आकांक्षी हैं तथा धृतराष्ट्र की बुद्धि विचलित है कि वह किसी एक बात पर अधिक समय तक स्थिर नहीं रहते साथ ही क्षुद्र मानसिकता के वाहक हैं जो विपरीत द्वन्द्वों से भयभीत होकर कर्म नहीं करते जड़ होकर बैठ जाते हैं, सब कुछ भाग्य पर छोड़ देते हैं।

तैंतीसवें अध्याय में महात्मा विदुर ने पण्डितों (बुद्धिमानों) के लक्षण बताने के साथ–साथ मूर्खों के विषय में भी बताया है[11]। साथ ही सत्य क्या है[12] यह बताते हुए विदुर धृतराष्ट्र को सचेत भी करते हैं आप इसको नहीं समझ रहे हैं। इसी प्रकार क्षमा[13] के विषय में बताते हुए विदुर धृतराष्ट्र को समझाते हैं कि क्षमाक्षील को दुर्बल नहीं समझना चाहिए अर्थात् विदुर यह जानते थे कि धृतराष्ट्र सत्ता के बल पर तथा असीमित सेना आदि के होने के कारण पांचों पाण्डवों को दुर्बल मान रहे हैं। साथ ही पांडवों द्वारा अनेकशः दुर्योधन के कपटपूर्ण व्यवहार को भाई मानते हुए क्षमा करना उनकी कमजोरी समझ रहे हैं।

अहिंसा, विद्या, निर्धन की मूर्खता[14] आदि के विषय में बताते हुए विदुर धृतराष्ट्र से कहते हैं कि हे राजन् जो पुरुष शक्तिशाली होने पर भी क्षमा करने वाला और निर्धन होने पर भी दान देने वाला होता है वह स्वर्ग से भी ऊपर के लोकों में स्थान प्राप्त करता है[15] इसके अतिरिक्त राजा के लिए कौन त्याज्य है कौन नहीं[16] किसकी पूजा करके व्यक्ति यश प्राप्त करता है[17] आदि अनेकानेक ज्ञान वर्धक उपदेश दिए। तैंतीसवें अध्याय के अन्त में विदुर धृतराष्ट्र को पुनः उनका कर्म एवं धर्म समझाते हुए कहते हैं हे तात पांडवों को उनका न्यायोचित भाग देकर आप अपने पुत्रों के साथ होते हुए सुख भोगिए। ऐसा करने पर आप देवताओं तथा मनुष्यों के आलोचना के विषय नहीं रह जाएंगे।[18]

चौंतीसवें अध्याय में पुनः धृतराष्ट्र की व्याकुल मनः स्थिति के दर्शन होते हैं और वे विदुर से करने योग्य कार्यों के विषय में जानने की इच्छा प्रकट करते हैं।[19] विदुर पुनः उन्हें सचेत करते हुए समझाते हैं कि मैं जो धर्मयुक्त वचन अब कहने जा रहा हूँ उन्हें ध्यानपूर्वक सुने क्योंकि उनसे ही आपका और पूरे कुल का हित संभव है, कपटपूर्ण कार्यों (द्यूतक्रीडा आदि की ओर विदुर का संकेत) में मन मत लगाइये–

"मिथ्योपेतानि कर्मणि सिध्येयुर्यानि भारत।
अनुपायप्रयुक्तानि सा मा स्म तेषुमनः कृतः।।"

इस प्रकार धर्म, न्याय, विनम्रता पूर्ण कर्मों का विवेचन तथा काम क्रोध आदि दुर्गुणों पर विजय पाना आदि का वर्णन करते हुए विदुर पुनः युधिष्ठिर के गुणों को धृतराष्ट्र के समक्ष रखते हैं।

प्रजागर पर्व के 35वें अध्याय में महात्मा विदुर राजा प्रह्लाद के पुत्र विरोचन तथा एक साधारण किन्तु विद्वान्, ब्राह्मण सुधन्वा के मध्य 'केशिनी' नामक प्रेयसी को लेकर उत्पन्न हुए विवाद का अत्यन्त मार्मिक, सटीक एवं सजीव ढंग से विवेचन करते हुए धृतराष्ट्र को समझाया कि राजा प्रहलाद ने निष्पक्ष एवं न्याय बुद्धि से निर्णय किया। यद्यपि यह निर्णय उनके पुत्र के विरूद्ध गया किन्तु प्रहलाद ने न केवल अपार यश, प्रशंसा प्राप्त की साथ ही सुधन्वा ने उनके पुत्र के प्राणों की रक्षा की इच्छा प्रकट की। परिणमस्वरूप अपने पुत्र के प्राण भी बचा लिए।[21]

पुत्र मोह में फंसे धृतराष्ट्र द्वारा अब भी कोई ठोस निर्णय न लिए जाने के कारण महात्मा विदुर ने 36वें अध्याय में दत्तात्रेय और साध्यदेवताओं के संवाद रूप प्राचीन इतिहास के ज्ञान को प्रस्तुत किया और कौरवों तथा पांडवों की संधि कराकर स्वयं को दोषमुक्त करने का विचार प्रस्तुत दिया।

विदुर ने द्यूत क्रीडा में आसक्त पुत्रों को रोकने तथा द्यूत की निन्दा करते हुए धृतराष्ट्र से यह कहने में भी संकोच नहीं किया कि राजन मेरे कहने के उपरांत भी आपने अपने पुत्रों को इससे नहीं रोका।[22] बहुत ही सुन्दर ढंग से समझाते हुए विदुर कहते हैं 'वह बल नहीं, जिसका मृदुल स्वभाव के साथ विरोध हो। बल और मृदुल स्वभाव का सेवन करते रहना चाहिए क्योंकि क्रूरता पूर्वक उपार्जित लक्ष्मी नश्वर होती है और यदि वह मृदुलतापूर्वक बढ़ायी जाए तो पुत्रपौत्रों तक स्थिर रहती है।'[23]

कुल को बचाने और नीतिसंगत तथ्य प्रस्तुत करते हुए महात्मा विदुर ने एकता की शक्ति को अत्यन्त सुन्दर उपमानात्मक ढंग से समझाते हुए कहा 'भरतश्रेष्ठ धृतराष्ट्र जलती हुयी लकड़ियां पृथक्–पृथक् होने पर धुंआ फेंकती है और एक साथ होने पर प्रज्ज्वलित हो उठती है।[24]

सैंतीसवें अध्याय में विदुर भौतिक जगत के अनेक सुन्दर उपमानों के साथ नीति परक उपदेश धृतराष्ट्र को देते हैं,[25] जिन्हें सुनकर सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति भी उन्हें ग्रहण कर लेता है किन्तु धृतराष्ट्र की मनः स्थिति को परिवर्तित करने में ये उपदेश सफल नहीं होते। ये देख महात्मा विदुर ने अड़तीसवें अध्याय में उन्हें परिस्थितियों की विषमता और दुष्परिणामों के सम्बन्ध में चेतावनी सी देते हुए विनम्र निवेदन करते चलते हैं कि महाराज आप किसी भी प्रकार युद्ध को रोके और उसे न होने दें। वे दुर्योधन के अभिमान, अहंकार कुटिलता[26] आदि दुर्गणों को भी कहना नहीं भूलते।[27]

उन्तालीसवें अध्याय में धृतराष्ट्र की उस मनः स्थिति का पता महात्मा विदुर को भली भांति विदित हो जाता है जिसके कारण विदुर के दिए गए उपदेशों को समझते हुए धृतराष्ट्र सब कुछ भाग्य के अधीन है ऐसा कहकर अपना मन्तव्य स्पष्ट कर देते हैं कि वे कुछ नहीं करने वाले।[28] विदुर अपना संयम और धैर्य फिर भी नहीं खोते और पुनः अपने अकाट्य तर्कों से बुद्धिहीन बने हुए धृतराष्ट्र को समझाते हैं कि महाराज 'जो क्षय वृद्धि का कारण होता है वह क्षय नहीं है, इसके विपरीत उस लाभ को भी क्षय ही मानना चाहिए जिसे पाने से बहुत से लाभों का नाश हो जाता है।'[29] विदुर धृतराष्ट्र को भांति–भांति से परिवार, कुटुम्ब, निर्धनों, शत्रुओं, न्याय, निंदा, वंश आदि अनेक विषयों का अत्यन्त सारगर्भित नीतियां

अत्यन्त सहज और सरल ढंग से समझाते हैं तथा इस अध्याय के अन्त में पांडवों के साथ न्यायोचित व्यवहार करने का अनुरोध करते हैं।[30]

चालीसवें अध्याय तक आते–आते महात्मा विदुर यह समझ जाते हैं कि धृतराष्ट्र ने भले ही अपने मन की व्याकुलता दूर करने का मार्ग उनसे पूछा है किन्तु धृतराष्ट्र न्यायपूर्ण सद्मार्ग पर चलने में असमर्थ हैं। धृतराष्ट्र में न तो धर्म मार्ग पर चलने की जिजीविषा है और न ही इच्छा शक्ति। मन से हारे हुए, पुत्र के समक्ष धृतराष्ट्र विवश हैं। अतः इन नीति–उपदेशों का कोई प्रभाव पड़ने वाला नहीं है, किन्तु फिर भी विदुर युद्ध में डटे हुए उस वीर की भांति अपना धैर्य नहीं खोते जो यह जानते हुए भी कि वह परास्त होने वाला है, मृत्यु का आलिंगन करने वाला है, युद्ध क्षेत्र में डटा रहता है, साहस नहीं छोड़ता।

विदुर अपने नीति वाक्यों को समेटते हुए पुनः धृतराष्ट्र को सचेत करते हैं कि आसक्ति रहित, अपनी शक्ति के अनुसार न्यायपूर्वक चलने वाला ही सुयश पाता है और सुखी रहा है। झूठ बोलकर उन्नति करना, राजा के पास चुगली करना, गुरुजन पर झूठा दोषारोपण करना ये तीनों कार्य ब्रह्महत्या के समान हैं।[31] पुनः समझाते हुए कहते हैं कि हे राजन् धर्म नित्य है किन्तु सुख–दुख अनित्य है, जीव नित्य पर इसको धारण करने वाला शरीर अनित्य है। आप अनित्य को छोड़कर नित्य में स्थित होइए सबसे बड़े लाभ संतोष को धारण करिए।[32] धृतराष्ट्र की सबसे बड़ी दुर्बलता पुत्र मोह की निःसारता बताते हुए कहते हैं कि राजन् अत्यन्त कष्टों से पाला–पोसा गया हुआ पुत्र मर जाने पर घर से बाहर उठाकर काठ की लकड़ी में जला दिया जाता है, उसका धन दूसरे भोगते हैं, उसके शरीर की धातुओं को पक्षी खा जाते हैं, केवल उसका किया हुआ बुरा या अच्छा कर्म ही साथ जाता है।[33]

अन्त में इस अध्याय में विदुर विद्यार्थियों के लक्षण, उनके गुण दोषों की बुद्धिमत्ता पूर्ण ढंग से विवेचना करते हुए[34], ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्रिय, शूद्र के कर्त्तव्यों अकर्त्तव्यों को बताते हैं तथा धृतराष्ट्र को समझाते हुए कहते हैं कि महाराज इन चारों वर्णों का धर्म मैंने आपसे इसलिए बताया है क्योंकि आपके कारण युधिष्ठिर क्षत्रिय धर्म से गिर रहे हैं, अतः आप उन्हें राज्य धर्म में नियुक्त कीजिए।[35] इतना कहकर विदुर शान्त हो जाते हैं।

धृतराष्ट्र अन्त में विदुर के समस्त उपदेशों को यह कहकर नकार देते हैं कि मैं तो भाग्य को ही सर्वोपरि मानता हूँ। उसके सामने पुरूषार्थ व्यर्थ है।[36]

सन्दर्भ संकेत

1. महा० उद्योग प० – 33.1
2. वही, 33.11
3. वही, 33–9–11
4. महा० उद्योग प० – 33–13
5. महा० उद्योग प० – 33–14
6. महा० उद्योग प० – 33–20
7. महा० उद्योग प० – 33–18
8. महा० उद्योग प० – 33–23
9. महा० उद्योग प० – 33–24
10. महा० उद्योग प० – 33.23
11. महा० उद्योग प० – 33. 30–38
12. महा० उद्योग प० – 33. 46
13. महा० उद्योग प० – 33. 47
14. महा० उद्योग प० – 33. 52
15. महा० उद्योग प० – 33. 53
16. महा० उद्योग प० – 33. 58
17. महा० उद्योग प० – 33. 63
18. महा० उद्योग प० – 33. 104
19. महा० उद्योग प० – 34. 1–3
20. महा० उद्योग प० – 34. 6
21. महा० उद्योग प० – 35. 17–30
22. महा० उद्योग प० – 36. 68
23. महा० उद्योग प० – 36. 70
24. महा० उद्योग प० – 36. 58
25. महा० उद्योग प० – 37. 19, 60
26. महा० उद्योग प० – 38. 42–44
27. महा० उद्योग प० – 38. 46–47
28. महा० उद्योग प० – 39. 1
29. महा० उद्योग प० – 39. 5
30. महा० उद्योग प० – 39. 85
31. महा० उद्योग प० – 40. 2–3
32. महा० उद्योग प० – 40. 12
33. महा० उद्योग प० – 40. 14–17
34. महा० उद्योग प० – 40. 4–5
35. महा० उद्योग प० – 40. 24–27
36. महा० उद्योग प० – 40. 30